

संगीत में अवनद्ध वाद्यों की उपयोगिता

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा

जी. के. मेमोरियल कालेज ऑफ एजुकेशन चाकघाट रीवा (म.प्र.)

शोध सारांश

शब्द, स्वर, लय और ताल मिलकर संगीत में रस की उत्पत्ति करते हैं। साहित्य में छंद की विविधता और संगीत में ताल एवं लय के सामंजस्य द्वारा विभिन्न रसों की सृष्टि की जाती है। तालविहीन संगीत को नासिकाविहीन मुख की तरह बताया गया है। ताल से अनुशासित होकर ही संगीत विभिन्न भावों और रसों की उत्पत्ति कर पाता है। ताल की गतियाँ, स्त्रों (या "सतरों" यदि शास्त्रीय सन्दर्भ है) की सहायता के बिना भी रस-निष्पत्ति में सक्षम होती हैं। ताल एक ऐसी रचना है जो संगीत में समय को मापने के लिए प्रयोग की जाती है। इसकी लंबाई आवश्यकता अनुसार छोटी या बड़ी हो सकती है।

स्वर और लय, संगीत रूपी भवन के दो आधार स्तंभ हैं स्वर से राग और लय से ताल। लय को मापने के लिए मात्रा की रचना की गई। संगीत, गायन, वादन और नृत्य की त्रिवेणी है। इन तीनों में ताल का बड़ा महत्व है। गायक और वादक को हमेशा ताल का ध्यान रखना पड़ता है। वह नई-नई कल्पनाएँ करता है, किन्तु ताल से बाहर नहीं जा सकता। जितनी सुंदरता से वह ताल से मेल करता है, उतना ही उच्च कोटि का गायक कहलाता है। अच्छे गायक और वादक में ताल की कुशलता होना आवश्यक है।

अलाप के अतिरिक्त संगीत की सभी चीज़ें तालबद्ध होती हैं, इसलिए अलाप प्रारंभ में किया जाता है, और उसके समाप्त होते ही ताल प्रारंभ होती है। गीतों के प्रकारों के आधार पर विभिन्न प्रकार के तालों की रचना हुई ख्याल के लिए तीनताल, झपताल, झूमरा, तिलवाड़ा, रूपक आदि; तथा ध्रुपद के लिए चारताल, शूलताल आदि की रचना हुई।

प्रस्तावना

इन सभी तालों के बोल, गीत की प्रकृति के अनुसार चुने जाते हैं। इसी कारण, जब गायन के साथ तबला अथवा पखावज बजाया जाता है तो अधिक आनंद की अनुभूति होती है। गायन और वादन में स्वर और लय के माध्यम से, तथा नृत्य में अंग प्रदर्शन और लय के माध्यम से भावों को प्रकट किया जाता है। इतना ही नहीं, तबले के बोलों के टुकड़ों को भी नृत्य के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है।

उचित ताल के प्रयोग से ही संगीत में रस सृष्टि होती है, और तभी आनंद प्राप्त होता है। इसलिए साधारण जनता को लोकगीत तथा चित्रपट (फिल्मी) गीत अधिक पसंद आते हैं। ताल के रथ पर स्वरों की सवारी सजाकर, कुशल संगीतकार श्रोताओं को भाव-विभोर कर देते हैं। इसी कारण, ठुमरी, दादरा, ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा और तराना इत्यादि संगीत के सभी प्रकार ताल और लय के आश्रित रहकर यथोचित प्रभाव डालने में समर्थ होते हैं। ध्रुपद की गंभीरता और ठुमरी की चपलता यदि तालाश्रित न हो तो अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता।

अन्नमलाई विश्वविद्यालय के अनुसंधान विभाग में, स्वरों के साथ-साथ ताल-वाद्यों और नृत्य के पदाघातों से पौधों तथा खेतों पर अनेक सफल प्रयोग किए जा चुके हैं, जिनके माध्यम से उत्पादन क्षमता में दुगुनी वृद्धि तक की गई है। जहाँ ताल है, वहीं उसमें रस अंतर्निहित होता है। ताल के आघात की गति, वजन और घनत्व मिलकर, ताल के माध्यम से विभिन्न रसों को उत्पन्न करते हैं।

यह भी देखने में आता है कि अनेक पशु-पक्षी, निश्चित आघातों की ध्वनि सुनकर मनुष्य के इशारे पर कार्य करने लगते हैं। उनमें ध्वनि से अर्थ ग्रहण करने की क्षमता मनुष्य से अधिक होती है।

थपकियों से शिशु को नींद आ जाती है, घोड़ों की थकान मिट जाता है और कुत्तों में साहस जागता है। थपकी और सहलाने का अंतराल इतना सुखकर हो सकता है कि, मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी तक सुखकर तंद्रा में लीन हो जाते हैं। बिजली तो कड़कती ही रहती है, लेकिन कभी-कभी किसी गर्जना से दरवाजों के काँच तक टूट जाते हैं। ध्वनि की तरंगाघित सत्ता का यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। मेघों का गम्भीर घोष, नवोढ़ा नायिका के कोमल हृदय को अज्ञात भय से कँपा देता है। कबूतरों के झुण्ड उड़ जाते हैं, और जंगल के मोर बोल उठते हैं। यदि स्वर मन पर प्रभाव डालता है, तो ताल हृदय और मस्तिष्क को प्रभावित करती है। इसीलिए ताल का पहला प्रभाव हृदयगत धमनियों द्वारा रक्त में प्रकपन उत्पन्न करता हुआ, सम्पूर्ण शरीर को प्रभावित करता है।

भाव के किसी अभिव्यक्ति में स्वर आगे रहते हैं और ताल पीछे तथा कहीं ताल आगे आगे रहता है और स्वर उनका अनुसरण करते हैं। गीत में शब्द और भाव के अनुकूल जब ताल का प्रस्तुतीकरण किया जाता है, तो भावोदेक में तनिक भी विलंब नहीं होता और उसका प्रभाव अमिट होता है। क्योंकि ताल के आश्रय से स्वर स्थायित्व को प्रकट करता है।

अबोध शिशु को झुनझुना बजाकर किसने आकर्षित नहीं किया? जब शिशु के रुदन की गति बढ़ती है, तो झुनझुने की लय भी उतने ही वेग से बढ़ानी पड़ती है। परिणामस्वरूप बच्चा तालाघातों में लीन होते हुए शांत हो जाता है। सम्मोहक लय-आघातों को द्वारा रोगियों का इलाज करने के लिए अनेक देशों में प्रयोग किए जा रहे हैं। प्रायः देखने में आता है कि, लोहे के डिब्बे या पत्थर की दो गिट्टियों को बजाकर भिखारियों के बच्चे रेल के डिब्बे या सड़क पर ऐसा समा बाँधते हैं कि हर व्यक्ति का ध्यान खिंच जाता है और कुछ काल के लिए वे रसमग्न हो जाते हैं।

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी सामाजिक सुख दुःख की अभिव्यक्ति ढोल और नगाड़े जैसे तालवाद्यों द्वारा की जाती है। गाँव में किसी आगंतुक के आने पर ढोल की ताल से गाँव वालों को संकेत भेज दिये जाते हैं। उत्सव के समय दुःख और विषाद की सूचना के लिए अन्य ताल संकेतों का उपयोग किया जाता है। संचार माध्यम के अभाव में तुरही या ढोल ही उनकी सूचनाओं के आदान-प्रदान का अवलम्ब बनता है।

मुहर्रम के दिन मुस्लिमों का शिया सम्प्रदाय ताजियों का जूलूस निकालते समय केवल ढोल-ताँसे का वादन करवाकर युद्ध और विभीषिका की स्मृति दिलाता हुआ भयमिश्रित शोक को सजीव कर देता है। शब्द की यही शक्ति छंदोवद्ध होकर विविध मंत्रों के रूप में भौतिक और अध्यात्मिक प्रभाव उत्पन्न करने में सफल सिद्ध होती थी। इस प्रकार आज वैज्ञानिक अनुसंधान भी किए जा रहे हैं।

भारतीय मान्यता के अनुसार शंकर के डमरू से चैदह सूत्रों को प्रादुर्भाव हुआ, जिससे विविध स्वर, वण, वाक्य और मंत्रों की सृष्टि हुई है। आधुनिक काल में तार (दूरभाव) भेजने के लिए आघातों की विभिन्न लय और उनके प्रकार बनाकर संदेश भेज दिया जाता है। दूसरी ओर उन आघातों का अर्थ समझ कर उन्हें वाक्य में प्रत्यक्ष कर लिया जाता है और जब निश्चित व्यक्ति तक वह संदेश पहुँचना है, तो वह किसी वाणी की सहायता के बिना ही तत्सम्बन्धी व्यक्ति को प्रसन्न कर सकता है, और रूला सकता है। ताल-आघातों की यह प्रक्रिया सामान्य जीवन में अर्थ प्रकट करके रसोद्रेक में कारण बनती है। यह सर्वविदित है। लय और ताल के द्वारा समग्र प्रकृति की व्यवस्था का लघु चित्रण किया जा सकता है। प्राचीन काल में रंगमंच पर जब कोई नाटक खेला जाता था जो अकेला तबला-वादक दृश्य और अभिनेता के अभिनय के अनुसार दाएँ-बाएँ तबले पर आघातों द्वारा प्रत्येक भाव और रस को सफलता के साथ प्रदर्शित कर दिया करता था।

शास्त्र में काल, मार्ग क्रिया अंग, ग्रह जाति, कला, लय, यति और प्रस्तार ये ताल के दस प्राण बनाए गये हैं। इस सबके समुचित प्रयोग का मर्मज ही तालश कहलाता है।

ताल:-

भरत मुनि ने संगीत में काल (समय) नापने के साधन को 'ताल' कहा है। जिस प्रकार भाषा में व्याकरण की आवश्यकता होती है। गाने-बजाने और नाचने की शोभा ताल से ही है, यथा:-

तालस्तलप्रतिष्ठयामिति धायोद्य' स्मृतः।

गीतं गद्यं तथा नृत्यं यतरताले प्रतिष्ठितम्।।

(संगतरलाकर तालाध्याय)

ताल शब्द 'ताल' धातु बना है। संगीत रत्नाकर के अनुसार, जिसमें गीत वाद्य और नृत्य प्रतिष्ठित होते हैं, 'ताल' है। प्रतिष्ठा का अर्थ होता है - व्यवस्थित करना आधार देना या स्थिरता प्रदान करना। तबला, पखावज इत्यादि ताल वाद्यों से जब गाने की समय को मापा जाता है, तो एक विशेष प्रकार आनन्द प्राप्त होता है वास्वत में 'ताल' संगीत की जान है। 'ताल' पर ही संगी कला की इमारत खड़ी हुई है।

8वीं सदी में मतंग द्वारा लिखा गया 'बृहददेशी' ग्रंथ संगीत में महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी देशी संगी का सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रंथ माना गया है। मतंग ने अपने ग्रंथ में पूर्ववर्ती आचार्यों का बार-बार उल्लेख किया है। देव संगीत, नृत्य का उल्लेख किया है तथा वाद्याध्याय का भी उल्लेख है, किन्तु वह प्राप्त नहीं है। विभिन्न पदों के संदर्भ में तालों का उल्लेख प्राप्त होता है।

निष्कर्ष

भारतीय संगीत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखने पर पता चलता है कि यह अत्यंत प्राचीन है। यह तो सभी जानते हैं कि भारतीय संगीत की वर्तमान छवि हिन्दू-मुस्लिम संस्कृतियों का सुंदर मेल है। भारतीय संगीत की सभी विधाओं अर्थात् गायन, वादन, और नृत्य में हिन्दू संस्कृति तथा मुस्लिम संस्कृति का स्पष्ट सम्मिश्रण दृष्टिगत (परिलक्षित) होता है। चूंकि भारत के साथ अरब के व्यापारिक एवं सांस्कृतिक संबंध बहुत प्राचीन समय से रहे हैं, इसी वजह से भारत के संगीत में अरब संगीत का, और अरब संगीत में भारत के संगीत का अत्यंत सुंदर समन्वय हुआ है।

संगीत के क्षेत्र में ग़ज़ल की दुनिया अपने आप में एक अलग मुकाम रखती है। अरबी साहित्य से शुरू हुई यह काव्य विधा समय के साथ फारसी, उर्दू और हिन्दी साहित्य में भी काफी लोकप्रिय हुई। यँ तो आमतौर पर ग़ज़ल में जुदाई और कुछ खोने का दर्द होता है, लेकिन बावजूद इसके इसमें प्यार की रूमानीयत होती है एक ऐसी काव्यात्मक अभिव्यक्ति, जो किसी न किसी मोड़ पर हमारे दिल को छू जाती है और हमें सुकून देती है।

ग़ज़ल अधिकतर उर्दू या फारसी भाषा में होती है। इसमें आशिक-माशूक की बातों का वर्णन पाया जाता है। इसी कारण यह श्रृंगार रस प्रधान गायकी मानी जाती है।

ग़ज़ल ने अरबी साहित्य से फारसी, फारसी साहित्य से उर्दू साहित्य, और फिर हिन्दी साहित्य तथा अन्य भाषाओं के साहित्य तक का सफ़र तय किया है। ग़ज़ल को सही मायनों में उर्दू शायरी की "आबरू" कहा गया है। दिल को लुभाने और अपनी ओर खींचने की जो ताकत ग़ज़ल में है, वह किसी अन्य विधा में नहीं है और न ही हो सकती है। पूरी ज़िन्दगी की कहानी को दो शेरों में बयां करने की शैली केवल ग़ज़ल में है यह अन्य किसी भी विधा में संभव नहीं।

प्रारंभ में ग़ज़ल केवल हुस्न-ओ-इश्क तक ही सीमित थी, मगर धीरे-धीरे इसका दायरा बढ़ता गया और आजकल ग़ज़ल विश्व के अनेक मसलों (विषयों) की प्रवक्ता बन चुकी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. रविवारीय पत्रिका -स्वप्नल -सोनल, 23 जून 2012
2. संगीत ग़ज़ल अंक-डॉ. श. श्री परांजये, 1978 पृ. 7, 8
3. दर्द की लकीरें- विष्णुदत्त-विकल बोधि प्रकाशन, जयपुर, पृ. 5
4. हिन्दोस्तानी संगीत में ग़ज़ल गायकी-डॉ. प्रेम भण्डारी, सोजती गेट की बाहर, जोधपुर, 1993, पृ. 2
5. सृजन विश्व रविवारीय पत्रिका-साधना सोलंकी, बशीर बद्र, 23 नवम्बर 2008
6. तो हम क्या करें-कृष्णा कुमार 'कमसिन' पंकज बुक्स-दिल्ली पृ. 1
7. हिन्दोस्तानी संगीत में ग़ज़ल गायकी-डॉ. प्रम भण्डारी, सोजती गेट के बाहर, जोधपुर, 1993 पृ. 15